

अध्यात्म

संजीवनी

भक्तिमय भजन संग्रह



अध्यात्म

संजीवनी

भक्तिमय भजन संग्रह

प्राचीन कवियों व ज्ञानियों द्वारा विरचित
आध्यात्मिक भक्ति गीतों व स्तुतियों का
अनुपम संकलन

: प्रकाशक :

श्री कुन्दकुन्द-कहान पारमार्थिक ट्रस्ट
मुम्बई

प्रथम संस्करण :

**दसवें तीर्थंकर श्री शीतलनाथ भगवान केवलज्ञान कल्याणक व
सोलहवें तीर्थंकर श्री शांतिनाथ भगवान मोक्ष कल्याणक के
पावन अवसर पर प्रकाशित(पौष कृष्ण १४), २९ दिसम्बर, २०२४**

मुमुक्षुता की प्रगटता व भावना ही इस पुस्तक का मूल्य है।

अध्यात्म संजीवनी में समाहित गीत सभी प्रमुख

**AUDIO APP - Gaana, JioSaavan, Amazon Music, Spotify, Apple
i-tune, Google Music, Wynk Music, Youtube Music
आदि पर निःशुल्क उपलब्ध है।**

प्राप्ति स्थान :

श्री कुन्दकुन्द-कहान पारमार्थिक ट्रस्ट

302, कृष्णकुंज, प्लॉट नं. 30, नवयुग सीएचएस लि.

वी.एल.मेहता मार्ग, विले पार्ले (पश्चिम), मुम्बई 400056

website : www.vitragvani.com, **e-mail:** info@vitragvani.com

श्री दिगम्बर जैन स्वाध्याय मंदिर ट्रस्ट

सोनगढ़ (सौराष्ट्र) 364250, फोन : 02846 244334, 244358

website : www.kanjiswami.org, **e-mail :** contact@kanjiswami.org

तीर्थधाम मंगलायतन

अलीगढ़-सासनी मार्ग, सासनी-204216 (हाथरस), उत्तरप्रदेश

मोबा. 9997996346, 9756633800

Website : www.mangalayatan.com; **e-mail :** info@mangalayatan.com

पंडित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट

ए-4, बापू नगर, जयपुर - 302015

फोन. 0141 2707458, 2705581

Website : www.ptst.in, **e-mail :** info@ptst.in

अहो भाव

वीतरागी देव-शास्त्र-गुरु इस पवित्र जैन शासन के मूल आधार हैं। धर्मी श्रावकों को इनके प्रति सहज ही परम उत्कृष्ट अहोभाव आता है। जिनधर्म के प्रति अपूर्व भावना से प्रेरित होकर हजारों वर्षों से प्राकृत, संस्कृत और वर्तमान में हिन्दी तथा अन्य प्रचलित देशीय भाषाओं में अनेक ज्ञानियों व आत्मार्थी कवियों ने आध्यात्मिक भक्ति साहित्य की रचना की है। इन कवि रत्नों में श्री दौलतरामजी, श्री भागचन्दजी, श्री बुधजनजी, श्री दानतरायजी आदि द्वारा प्रसूत ये सभी भक्तियाँ भेदविज्ञान, वीतरागता व वैराग्य रस से सराबोर हैं। इन्हीं कवियों के भक्ति उपवन में से कुछ उत्कृष्ट भक्ति पुष्पों का संकलन यहाँ **अध्यात्म संजीवनी** के रूप में निबद्ध कर प्रस्तुत किया जा रहा है; अतः सर्वप्रथम हम उन सभी ज्ञानी कवियों के प्रति अपनी श्रद्धा सुमन समर्पित करते हैं।

इन आध्यात्मिक पदों को आत्मार्थी भव्य जीवों की आत्मरूचि पृष्ठ करने, चिरकाल तक सुरक्षित रखने एवं आगामी पीढ़ी तक पहुँचाने की पवित्र भावना से ही **श्री कुन्दकुन्द-कहान पारमार्थिक ट्रस्ट, मुम्बई** के द्वारा यह प्रयास किया गया है। आशा है कि आत्मार्थीजन इस अध्यात्म भक्ति अमृत का रसपान कर ज्ञान और वैराग्य की प्रेरणा लेंगे तथा इन भक्ति गीतों में समाहित भावों को समझकर निज स्वाध्याय में वृद्धि करेंगे।

प्रस्तुत अध्यात्म संजीवनी में ख्याति प्राप्त संगीतकार एवं गायक अलाप देसाई, आसित देसाई तथा सुरेश जोशी द्वारा संगीत की मधुर लहरियाँ तथा देश के कई प्रसिद्ध गायक कलाकारों द्वारा स्वर लहरियाँ प्रदान की गई हैं; अतः हम उन सभी कलाकारों व सहयोगियों के प्रति भी अपना हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं।

- श्री कुन्दकुन्द-कहान पारमार्थिक ट्रस्ट, विले पार्ले, मुम्बई

अनुक्रमणिका

एलबम-10 अध्यात्म संजीवनी (भाग-10)

पेज नं.

1.	६२ क्षं प्रभु ! ElS तुं	-	01
2.	विषयों की तृष्णा को छोड़ के..	-	03
3.	हे प्रभुवर धन्य हो तुम	-	05
4.	और अबै न कुदेव सुहावै	दौलतरामजी	07
5.	नाथ मोहि तारत क्यों ना	दौलतरामजी	09
6.	तन देख्या अथिर घिनावना	बुधजनजी	11
7.	आतम अनुभव करना रे भाई	द्यानतरायजी	13
8.	आतम जानो रे भाई	द्यानतरायजी	15
9.	परनति सब जीवनकी	बुधजनजी	17
10.	आतम अनुभव आवै	बुधजनजी	19

અધ્યાત્મ સંજીવની

ભાગ - 10

1

દૂર કાં પ્રભુ ! દોડ તું

દૂર કાં પ્રભુ ! દોડ તું, મારે રમત રમવી નથી;
 આ નયનબંધન છોડ તું, મારે રમત રમવી નથી. દૂર. ૧.
 પ્યાસુ પરમ રસનો સદા, શોધું પરમ-રસ-રૂપને;
 અનુભવ મને અવળો થયો, એવી રમત રમવી નથી...દૂર. ૨.
 હું તો સુધાનો સ્વાદિયો, ચાલ્યો સુધાની શોધમાં;
 ત્યાં ઝેરનો પ્યાલો મળ્યો, એવી રમત રમવી નથી....દૂર. ૩
 તું આવીને ઉત્સાહ દે કાં ફેંક કિરણ પ્રકાશનાં;
 આ લક્ષ વિણ રખડી મર્યાની, આ રમત રમવી નથી....દૂર. ૪
 હે તાત ! તાપ અમાપ આ, તપવી રહ્યા છે ત્રિવિધના;
 એ તાપમાંહી તપી મર્યાની, આ રમત રમવી નથી...દૂર. ૫.
 નથી સહન કરી શકતો પ્રભુ ! તારા વિરહની વેદના;
 હે દેવ ! તુજ દર્શન વિના, મારે રમત રમવી નથી....દૂર. ૬.
 નથી સમજ પડતી હે પ્રભુ ! કઈ જાતની આ રમત છે;
 ગભરાય છે ગાત્રો બધાં, મારે રમત રમવી નથી.દૂર. ૭.
 હો એ રમત ઘડી બે ઘડી, બહુ તો દિવસ બે ચારની;
 આ તો અનંતા યુગ ગયા, એવી રમત રમવી નથી....દૂર. ૮.
 ત્રિભુવનપતિ ! તુજ નામના થાક્યો કરી કરી સાદને;
 સુણતા નથી કયમ દાસને, આવી રમત રમવી નથી.દૂર. ૯.

हे प्रभु मैं आपके समीप रहूँ! अब विषयों के पीछे दौड़ नहीं, मैं संसार में घूमना नहीं चाहता; इस मोह बंधन को छोड़ दूँ मैं और भव भ्रमण करना चाहता नहीं। मुझे सदा परम सुख की अभिलाषा है परम-रस-रूप की खोज का निर्णय हुआ है; आत्म अनुभव ने मुझे इस क्षणिक संसार के विषयों से दूर कर दिया... दूर ॥ 1-2 ॥

मैंने आत्मिक सुख याने अमृत का स्वाद चखा है, सुधा की खोज में; जहाँ जहर का प्याला मिले, ऐसा उपक्रम नहीं करना। ऐसा कोई राग द्वेष नहीं करना। आप मेरे हृदय में आओ, मन उत्साहित करो या मेरे अंतर में समा जाओ, अपने ज्ञान प्रकाश की किरणों से हमें प्रकाशित कीजिए।; (क्योंकि आप स्व पर प्रकाशत्व शक्ति से परिपूर्ण हो।) ऐसे लक्ष्य के बिना जीवन की एक भी घड़ी कार्यकारी नहीं है। प्रभु... ॥ 3-4 ॥

हे तात! तप अपरिमेय है, आपने त्रिविधि कर्म को जला दिए हैं; इस तप रूपी अग्नि में तपकर, यह संसार स्वांग फिर कटना नहीं है। प्रभु हम आपका विरह सहन नहीं कर सकते! प्रभु! आपके विरह का दुख असहनीय है; हे प्रभु! आपके दर्शन के बिना, मुझे कहीं भी अच्छा नहीं लगता। दूर... ॥ 5-6 ॥

मुझे समझ नहीं आता प्रभु! यह कैसा विचित्र संयोग है; रूह का हर कतरा डरा हुआ है, मैं ऐसे संसार के दुःख नहीं चाहता। मुझे तो आपके समान सच्चा सुखी और निर्भय होना है। जैसे कोई खेल घंटे दो घंटे तक चलता है, कभी-कभी दो या चार दिन तक चलता है, लेकिन अनंत युग बीत गया है, ऐसा कोई कार्य नहीं जो मैंने कभी नहीं किया, ऐसा कोई भोग नहीं जो मैंने नहीं भोगा। दूर... ॥ 7-8 ॥ (अनादि काल से हमने अनंत बार पंच परावर्तन पूरे किये, फिर भी सच्चा सुख नहीं मिला ऐसा क्यों? क्योंकि सच्चा अपना स्वरूप नहीं समझा) हे त्रिभुवनपति! आपके नाम मात्र का स्मरण करने से भव की थकान मिट जाती है। हे प्रभु! मेरी विनती सुनिए, मुझे सदा के लिए अपने चरणों में स्थान दीजिए, अपने समान वीतरागी बना लीजिए। मैं भी परिपूर्ण हूँ, सुन लीजिए विनती मेरी, दूर ऐसा भव भ्रमण हो ॥ 9 ॥ जन्म मरण जरा रोग से दूर हो जाऊँ।



2

विषयों की तृष्णा को छोड़ के..

विषयों की तृष्णा को छोड़ के, संयम की साधना में, चल पड़े नेमिकुमार ।
परिग्रह की चिन्ता को तोड़ के, निज के चिन्तन में, रम रहे नेमिकुमार ॥ टेक ॥

यह जीव अनादि से, है मोह से हारा,
चहुँगति में भटक रहा, दुख सहता बेचारा ।
कोई नहीं है शरण अतः आतम की शरण में,
जाना जगत असार, चल पड़े नेमिकुमार ॥ १ ॥

विषयों की तृष्णा को छोड़ के, संयम की साधना में, चल पड़े नेमिकुमार ।
प्रभु चल पड़े वन को, ध्यायें निज चेतन को,
सब राग तन्तु तोड़, काटे भव बन्धन को ।
फिर मोह शत्रु नाशें और क्षायिक चारित्र धारें,
जिसमें है आनन्द अपार, चल पड़े नेमिकुमार ॥ २ ॥

विषयों की तृष्णा को छोड़ के, संयम की साधना में, चल पड़े नेमिकुमार ।
कर चार घातिये क्षय, प्रगटे चतुष्टय अक्षय,
सारी सृष्टि झलके, परिणति निज में तन्मय ।
शाश्वत शिवपद पायें, और अब मुक्ति वधु व्याहें,
हो भव-सागर पार, चल पड़े नेमिकुमार ॥ ३ ॥

विषयों की तृष्णा को छोड़ के, संयम की साधना में, चल पड़े नेमिकुमार ।

अहो! धन्य हैं २२वें तीर्थंकर नेमिकुमार! जिन्होंने सभी इन्द्रिय विषयों की तृष्णा का त्याग कर दिया है, जो अब मात्र अपने अन्तरंग में विद्यमान आत्मा में लीन होने हेतु संयम के मार्ग पर अग्रसर हो चुके हैं। उन्हें अब अपने राज-वैभव के परिग्रह की चिन्ता नहीं है, वे तो निजात्म के चिन्तन में ही रमने की ओर अग्रसर हैं ॥ टेक ॥

निश्चय से देखा जाये तो यह जीव इस पर्यायमात्र जितना नहीं अपितु यह तो अनादि से इस जग में रहने वाला है, परन्तु अनन्त संसार का कारण अर्थात् मोह उससे विजयी नहीं हो पाया अतः चतुर्गति में परिभ्रमण कर रहा है, अनन्त दुःख सह रहा है। इस जीव को संसार के परमार्थ का भान नहीं कि इस जगत में सुख-दुख हेतु कोई शरण नहीं, निश्चय शरण तो निज भगवान आत्मा ही है। लेकिन देखो! इस सत्य से नेमिकुमार का तो अब परिचय हो गया है अतः वे इस संसार को असार जानकर अपना मोक्षमार्ग प्रशस्त करने चल पड़े हैं ॥ १ ॥

नेमि प्रभु तो अब वन की ओर उन्मुख हो चुके हैं, वहाँ समस्त परिग्रह का त्यागकर वे निज चेतन का ही ध्यान करेंगे। उन्होंने सभी राग के बंधनों को तोड़ दिया है अतः संसार मोह के बंधन को काटने हेतु वे तत्पर हैं। छठवें-सातवें गुणस्थान में झूलने वाले नेमि मुनिराज जब उग्र ध्यान में लीन होंगे, तो वे श्रेणी आरोहण कर सम्पूर्ण मोह का क्षय कर बारहवें गुणस्थान को प्राप्त हो जायेंगे। जहाँ दर्शन एवं चारित्र मोह के क्षय होने से क्षायिक सुख व चारित्र की प्राप्ति होगी और अपार अतीन्द्रिय सुख का वे भोग करेंगे ॥ २ ॥

बारहवें गुणस्थान में जब वे आत्मा में क्षायिक भाव से लीन होंगे तो कुछ ही समय पश्चात् उन्हें चार घातिया कर्मों का क्षय हो जायेगा और वे अनन्त चतुष्टय के धारी जिनेन्द्र परमात्मा बन जायेंगे और उनके ज्ञान में सम्पूर्ण विश्व अपने द्रव्य-गुण-पर्याय सहित जानने में आयेगा। तथापि वे उनमें नहीं अपने आत्मस्वभाव में ही केन्द्रित होंगे। तेरहवें गुणस्थान में उनके तीर्थंकर नामकर्म प्रकृति का उदय होगा और सौधर्म इन्द्र की आज्ञा से समवशरण की रचना होगी। और उसके भी कुछ समय पश्चात् जब वे योग निरोध करके चार अघातियाँ कर्मों का भी क्षय कर देंगे तब उनका परिणय मुक्ति रूपी वधु से होगा अर्थात् वे शाश्वत सिद्ध अवस्था को प्राप्त होंगे और संसार समुद्र से सदा-सदा के लिये पार हो जायेंगे ॥ ३ ॥



3

हे प्रभुवर धन्य हो तुम

हे प्रभुवर धन्य हो तुम, निज में ही रहते हो ।
 निज स्वरूप को दर्शाते, ज्ञायक में ही रहते हो ।। (२)
 तुम जैसा बन जाऊँ, सम्यक्दर्शन पा जाऊँ।
 हे प्रभु... हे प्रभु... हे प्रभु... हे प्रभु... ॥ टेक ॥
 वीतराग छवि प्यारी है, जग जन तो मनहारी है।
 समता पाठ पढ़ाती है, ध्यान की याद दिलाती है । ।
 निज स्वरूप में जाना है, शुद्धात्म में रहना है।
 तुम जैसा तुम जैसा, हे प्रभु... हे प्रभु... ॥ १ ॥
 ऐसा ही प्रभु में भी हूँ, ये प्रतिविम्ब ही मेरा है।
 भली भाँति मैंने पहचाना, ऐसा रूप भी मेरा है । ।
 अब ना ये गलती करना, निज में ही दृष्टि करना है।
 तुम जैसा तुम जैसा, हे प्रभु... हे प्रभु... ॥ २ ॥
 ध्रुवदृष्टि प्रगटी मुज में, अब ध्रुव में ही स्थिरता हो ।
 ज्ञेयो में उपयोग ना जावे, ज्ञायक में ही रमता हो । ।
 अब नहीं पर में जाना है, निज में ही रम जाना है।
 तुम जैसा तुम जैसा, हे प्रभु... हे प्रभु... ॥ ३ ॥
 जैसा प्रभु का रूप है, वही स्वरूप ही मेरा है।
 परम पारिणामिक अविकारी, ध्रुव स्वरूप ही मेरा है।
 मोक्षपुरी में चलना है, शिवरमणी को वरना है।
 तुम जैसा तुम जैसा, हे प्रभु... हे प्रभु... ॥ ४ ॥

हे प्रभु! आप धन्य हैं क्योंकि आप अपने आत्म स्वरूप में ही रहते हैं और आप स्वरूप को ही दिखाते हैं और अपने ज्ञायक स्वरूप में निवास करते हैं। हे प्रभु! मेरी भावना है कि मैं सम्यकदर्शन पाकर आपका समान बन जाऊँ ॥ टेक ॥

आपकी वीतरागी मुद्रा अत्यंत सुंदर है और जगत के जीवों का मन हरने वाली है। आपकी मुद्रा समता भाव की शिक्षा देती है और हमें ध्यान करने की प्रेरणा देती है। हे प्रभु! मेरी भावना है कि आपके समान मुझे अपने शुद्धात्मा में और अपने आत्म स्वरूप में ही रहना है ॥ १ ॥

हे प्रभु! आपको देखकर ऐसा लगता है कि यह प्रतिबिंब मेरे स्वरूप को ही दिखा रहा है। मैं भी आपके समान हूँ। मैंने आपका रूप सम्यक प्रकार से पहचान लिया है कि मेरा स्वरूप भी आपके समान है। मेरी भावना है कि अब मुझे आत्मा को भूलने की गलती नहीं करना है और अपनी आत्मा की दृष्टि करना है ॥ २ ॥

हे प्रभु! आपके दर्शन करने से मेरे अंदर में ध्रुव चैतन्य की दृष्टि प्रकट हो गई है। अब भावना यह है कि चैतन्य में ही स्थिर रहूँ, मेरा उपयोग ज्ञेयों में न जाए और ज्ञायक में ही रमण करे। अब मुझे परद्रव्यों में ना जाकर आत्मा में ही रमण करना है ॥ ३ ॥

हे प्रभु! जैसा आपका स्वरूप है वैसा ही मेरा स्वरूप है। मैं भी परम परिणामिक भाव वाला, विकारों से रहित ध्रुव स्वरूप वाला हूँ। मेरी भावना है कि अब मुझे भी मोक्ष में चलना है और मुक्तिरूपी वधू का वरण करना है ॥ ४ ॥



4

और अबै न कुदेव सुहावै

और अबै न कुदेव सुहावै, जिन थाके चरनन रति जोरी ॥ टेक ॥

कामकोहवश गर्दै अशन असि, अंक निशंक धरै तिय गोरी ।
औरनके किम भाव सुधारें, आप कुभाव-भारधर-धोरी ॥ १ ॥

तुम विनमोह अकोहछोहविन, छके शांत रस पीय कटोरी ।
तुम तज सेय अमेय भरी जो, जानत हो विपदा सब मोरी ॥ २ ॥

तुम तज तिनै भजै शठ जो सो, दाख न चाखन खात निमोरी ।
है जगतार उधार 'दौलको', निकट विकट भवजलधि हिलोरी ॥ ३ ॥

हे जिनेन्द्रदेव अब मुझे मिथ्यादेव अच्छे नहीं लगते। अब तो मैंने आपके चरणों से प्रेम जोड़ लिया है ॥ टेक ॥

मिथ्यादेव काम-क्रोध के वशीभूत हैं, भोजन ग्रहण करते हैं, शस्त्र धारण करते हैं और निःशंक होकर अपने साथ में सुन्दर स्त्री को धारण करते हैं। वे दूसरों के भाव क्या सुधारेंगे? स्वयं ही अनेक खोटे भावों को धारण करते हैं ॥ १ ॥

किन्तु हे जिनेन्द्रदेव । आप मोहरहित हैं, क्रोधरहित हैं, क्षोभरहित हैं और शान्तिरस की कटोरी पीकर तृप्त हो गये हैं। मैंने आपकी सेवा का त्यागकर जो अनन्त दुःख सहन किये हैं, उन्हें आप भली-भाँति जानते हैं ॥ २ ॥

हे प्रभो ! जो जीव आपको त्यागकर उन मिथ्यादृष्टि देवों की उपासना करते हैं वे दाख का स्वाद नहीं लेते, निबोरी ही खाते हैं। कविवर दौलतराम कहते हैं कि हे जगत को तारनेवाले जिनेन्द्रदेव । इस भयानक संसार-समुद्र की हिलोरों से मेरा शीघ्र उद्धार कीजिए ॥ ३ ॥



5

नाथ मोहि तारत क्यों ना

नाथ मोहि तारत क्यों ना ? क्या तकसीर हमारी ? ॥ टेक ॥
 अंजन चोर महा अघकरता, सप्तविसनका धारी ।
 वो ही मर सुरलोक गयो है, बाकी कछु न विचारी ॥१॥ नाथ॥
 शूकर सिंह नकुल बानर से, कौन कौन व्रतधारी ?
 तिनकी करनी कछु न विचारी, वे भी भये सुर भारी ॥२॥ नाथ॥
 अष्टकर्म वैरी पूरबके, इनमो करी खुवारी ।
 दर्शनज्ञानरतन हर लीने, दीने महादुख भारी ॥३॥ नाथ॥
 अवगुण माफ करे प्रभु सबके, सबकी सुध न विसारी ।
 'दौलत' दास खड़ा करजोरे, तुम दाता में भिखारी ॥४॥ नाथ॥

हे स्वामी! आप इस संसार-सागर से मुझे क्यों नहीं पार करते हैं? मेरा क्या दोष है? ॥ टेक ॥

हे स्वामी अंजन चोर बड़े-बड़े पाप करता था और सप्त व्यसनों का धारक था, किन्तु वह भी यहाँ में मरकर देवलोक में गया है। आपने उसके पापों पर कोई ध्यान दिया ॥ १ ॥

इसी प्रकार शूकर, सिंह, नकुल ओर वानर ने भी कोई व्रतादि नहीं धारण कर रखे थे, परन्तु वे भी मरकर स्वर्ग में देव हुए हैं। आपने उनके कर्मों की ओर भी कोई ध्यान नहीं दिया ॥ २ ॥

हे स्वामी। ये अष्टकर्म मेरे पूर्व जन्म के शत्रु हैं। इन्होंने मेरी दुर्दशा कर रखी है, मेरे दर्शन-ज्ञान-चारित्ररूपी रत्नों को मुझसे छीन लिया है ओर मुझे अपार दुख दे रहा है ॥ ३ ॥

कविवर दौलतराम कहते हैं कि हे स्वामी! आपने सबके अवगुणों को क्षमा किया और सभी को भली प्रकार संभाला है। अब आपका दास मैं भी आपके समक्ष हाथ जोड़कर खड़ा हूँ। मेरा भी उद्धार कीजिए। हे स्वामी! आप बड़े दाता हैं ओर मैं भिखारी हूँ ॥ ४ ॥

6

तन देख्या अथिर घिनावना

तन देख्या अथिर घिनावना ॥ तन. ॥ टेक ॥

बाहर चाम चमक दिखलावै, माहीं मैल अपावना ।

बालक जवान बुढापा मरना, रोगशोक उपजावना ॥ १ ॥ तन. ॥

अलख अमूरति नित्य निरंजन, एकरूप निज जानना ।

वरन फरस रस गंध न जाकै, पुण्य पाप विन मानना ॥ २ ॥ तन. ॥

करि विवेक उर धारि परीक्षा, भेद-विज्ञान विचारना ।

'बुधजन' तनतें ममत मेटना, चिदानंद पद धारना ॥ ३ ॥ तन. ॥

मैंने शरीर का स्थिर और धिनौना रूप देख लिया है ॥ टेक ॥

बाहर से तो यह शरीर अथवा चमड़ी सुन्दर दिखाई देती है परंतु अंदर इस अस्थिर देह के पीछे अपवित्र मैल ही मैल है। यह शरीर बालक, युवावस्था, वृद्धावस्था और मृत्यु के स्वरूप वाला है और रोग और शोक को उत्पन्न करने वाला है ॥ १ ॥

मैं तो इंद्रियों से पार, अमूर्तिक, सदा रहने वाला, विकार रूपी कालिमा से रहित एक रूप निज स्वभाव वाला हूँ। मेरे चैतन्य में वर्ण, स्पर्श, रस, गंध नहीं है और मेरी आत्मा में पुण्य पाप के परिणाम भी नहीं हैं ॥ २ ॥

कविवर बुधजनजी कहते हैं कि हृदय में भेदज्ञान धारण करके देह और आत्मा की परीक्षा करना और सम्यक दर्शन की प्राप्ति करना चाहिये। शरीर की मैं एकत्व भाव को नष्ट करके चिदानंद पद को धारण करना चाहिए ॥ ३ ॥



7

आतम अनुभव करना रे भाई

आतम अनुभव करना रे भाई, आतम अनुभव करना रे।।
जब लों भेद ज्ञान नहिं उपजै, जन्म मरण दुख भरना रे।।
आगम पढि नव तत्त्व बखानै, व्रत तप संयम धरना रे।
आतम ज्ञान बिना नहिं कारज, योनी संकट परना रे।।
आतम अनुभव करना रे भाई आतम अनुभव करना रे।।
सकल ग्रंथ दीपक हैं भाई, मिथ्या तम के हरना रे।
कहा करें ते अंध पुरुष को, जिन्हें उपजना मरना रे।।
आतम अनुभव करना रे भाई आतम अनुभव करना रे।।
'द्यानत' जे भवि सुख चाहत हैं, तिनको यह अनुसरना रे।
सोऽहं, ये दो अक्षर जपकै, भव जल पार उतरना रे।।
आतम अनुभव करना रे भाई आतम अनुभव करना रे।।

हे भाई! अपनी आत्मा का अनुभव करना। जब तक भेद ज्ञान उत्पन्न नहीं होगा तब तक जन्म और मरण के कष्टों को सहन करना पड़ेगा ॥ टेक ॥

शास्त्र अभ्यास करना, नव तत्वों की चर्चा एवं व्रत-नियम संयम व तप धारण करने के बाद भी यदि आत्मज्ञान का कार्य नहीं किया तो हमें संसार के दुखों को सहन करना पड़ेगा, इसलिए अपनी आत्मा का अनुभव करना ॥ १ ॥

जितने भी जैन शास्त्र हैं वे दीपक की तरह हैं और मिथ्यात्व रूपी अंधेरे को दूर करने वाले हैं परंतु जिन्हें शास्त्र अभ्यास नहीं करना है वे अंधे पुरुष की तरह हैं और उन्हें जन्म मरण का कष्ट सहन करना पड़ेगा। अतः हे भाई! अपनी आत्मा का अनुभव करना ॥ २ ॥

कविवर दयानाराय जी कहते हैं कि जो भव्य जीव सुख की प्राप्ति करना चाहते हैं उनको इन शास्त्रों का अनुसरण करना चाहिए। सोऽहं अर्थात् वही मैं हूँ - इन दो अक्षरों का ध्यान करके भव संसार से पार उतरना चाहिए। हे भाई! अपनी आत्मा का अनुभव करना ॥ ३ ॥



8

आतम जानो रे भाई

आतम जानो रे भाई! ॥ टेक ॥

जैसी उज्जल आरसी रे, तैसी आतम जोत ।

काया-करमनसों जुदी रे, सबको करै उदांत ॥ आतम. ॥ १ ॥

शयन दशा जागृत दशा रे, दोनों विकलपरूप ।

निरविकलप शुद्धातमा रे, चिदानंद चिद्रूप ॥ आतम. ॥ २ ॥

तन वचसेती भिन्न कर रे, मनसों निज लौं लाय ।

आप आप जब अनुभवै रे, तहां न मन वच काय ॥ आतम. ॥ ३ ॥

छही दरब नव तत्त्वतै रे, न्यारो आतमराम ।

'द्यानत' जे अनुभव करें रे, ते पावैं शिवधाम ॥ आतम. ॥ ४ ॥

हे भाई! अपनी आत्मा को जानो ॥ टेक ॥

जैसे दर्पण उज्ज्वल, स्वच्छ व स्पष्ट होता है वैसे ही उज्ज्वल, स्वच्छ व स्पष्ट आत्मा होती है। जैसे स्वच्छ दर्पण स्पष्ट व उज्ज्वल छवि प्रकाशित करता है वैसे ही शरीर और कर्मों से भिन्न ज्योतिरूप यह आत्मा सबको प्रकाशित करनेवाला है ॥ १ ॥

निद्रित होना व जागृत होना दोनों ही विकल्प हैं। इन दोनों ही अवस्थाओं से परे है अपने निर्विकल्प शुद्ध आत्मा का स्वरूप, स्थिर व अचल, शान्त व निर्मल ॥ २ ॥

देह और वचन से भिन्न करके अपने मन से इसमें लौ लगाओ, रुचि जगाओ। जब तुम्हारे अनुभव में इसके अस्तित्व का भान हो, तो वहाँ मन, वचन और काय तीनों का अभाव हो जायेगा ॥ ३ ॥

यह आत्म द्रव्य छहों द्रव्य, सात तत्व व नोकर्म से सर्वथा भिन्न है। कविवर दयानतराय जी कहते हैं कि जो इसका अनुभव करता है वह ही मोक्ष को पाता है ॥ ४ ॥



9

परनति सब जीवनकी

परनति सब जीवनकी, तीन भाँति वरनी।
 एक पुण्य एक पाप, एक रागहरनी ॥ टेक ॥
 तामे शुभ अशुभ अंध, दोय करें कर्मबंध ।
 वीतराग परनति ही, भवसमुद्रतरनी ॥ १ ॥
 जावत शुद्धोपयोग, पावत नाहीं मनोग।
 तावत ही करन जोग, कही पुण्य करनी ॥ २ ॥
 त्याग शुभ क्रियाकलाप, करो मत कदाच पाप।
 शुभमें न मगन होय, शुद्धता विसरनी ॥ ३ ॥
 ऊँच ऊँच दशा धारि, चित्त प्रमाद को विडारि ।
 ऊँचली दशार्ते मति, गिरो अधो धरनी ॥ ४ ॥
 भागचन्द' या प्रकार, जीव लहै सुख अपार ।
 याके निरधार स्याद-वाद की उचरनी ॥ ५ ॥

सभी जीवों की परिणति तीन प्रकार से बताई गई है - पुण्य, पाप और राग का हरण करने वाली (शुद्ध) ॥ टेक ॥

उनमें पुण्य-पाप परिणति (शुभाशुभ) बन्धरूप होती है जिससे कर्म बन्धन होता है और शुद्ध वीतराग परिणति भवरूपी समुद्र को पार कराती है ॥ १ ॥

जबतक मनोज्ञ शुद्धोपयोग प्राप्त न हो तबतक ही पुण्य परिणति करने योग्य कही है ॥ २ ॥

पुण्य (शुभ) रूप परिणति को त्यागकर पाप के कार्य मत करो किन्तु शुभ में मगन होकर शुद्ध परिणति को भूलना नहीं चाहिए ॥ ३ ॥

ऊँची-ऊँची दशा को धारणकर चित्त के प्रमाद को खत्मकर ऊँची दशा से नीची दशा की ओर मत गिरना ॥ ४ ॥

भागचंद जी कह रहे हैं कि इसप्रकार ही जीव अपार सुख को प्राप्त करता है। इसका निर्धारण करना ही स्याद्वाद की कथन पद्धति है ॥ ५ ॥



10

आतम अनुभव आवै

आतम अनुभव आवै...

आतम अनुभव आवै जब निज आतम अनुभव आवै,
और कछु न सुहावै जब निज आतम अनुभव आवै ॥ टेक ॥

रस नीरस हो जात तत्-च्छिन, अक्ष विषय नहि भावै ॥ १ ॥

जब निज आतम अनुभव आवै...

गोष्ठी कथा कुतुहल विघटे, पुगल प्रीति नसावै ॥ २ ॥

जब निज आतम अनुभव आवै...

राग-द्वेष जुग चपल पक्षजुत, मन पक्षी मर जावै ॥ ३ ॥

जब निज आतम अनुभव आवै...

ज्ञानानन्द सुधारस उमगे, घट अन्तर न समावै ॥ ४ ॥

जब निज आतम अनुभव आवै...

'भागचन्द' ऐसे अनुभव के हाथ जोरि सिर नावे ॥ ५ ॥

जब निज आतम अनुभव आवै...

जब अपनी आत्मा का अनुभव होता है तब कहीं और मन नहीं लगता ॥ टेक ॥

संसार के बाहर के सभी रस आत्मा के अनुभव के बाद रस विहीन हो जाते हैं और इंद्रियों के विषय भोग भी मन को नहीं भाते ॥ १ ॥

जब अपने चैतन्य का अनुभव होता है तब गोष्ठी, कथा आदि सांसारिक चर्चाओं में जिज्ञासा समाप्त हो जाती है और पुद्गल के प्रति ममत्व परिणाम नष्ट हो जाता है ॥ २ ॥

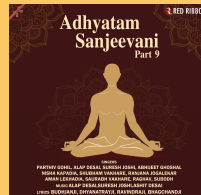
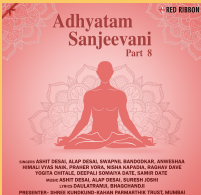
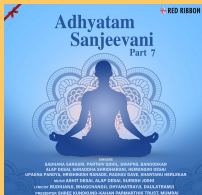
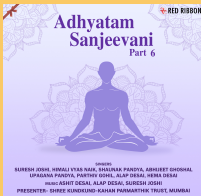
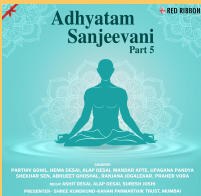
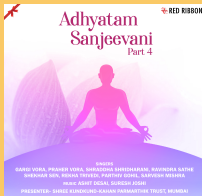
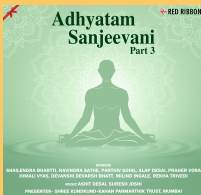
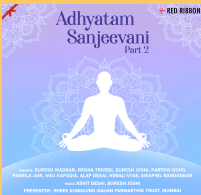
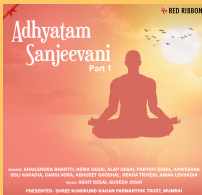
अपनी आत्मा का अनुभव हो जाने पर राग और द्वेष रूपी पक्षपात वाले परिणाम और मन की वासनाएँ समाप्त हो जाती हैं ॥ ३ ॥

जब अपनी आत्मा का अनुभव होता है तब अंतर में ज्ञान और आनंद रूपी अमृत रस का जन्म होता है और मानो आत्मा का अपार आनंद अंतर में नहीं समाता ॥ ४ ॥

कविवर भागचंद जी कहते हैं कि मैं ऐसे आत्मा के अनुभव को हाथ जोड़कर और सिर झुकाकर नमस्कार करता हूँ ॥ ५ ॥



ADHYATAM SANJEEVANI
• Songs Available On AUDIO APP •



Shree Kundkund-Kahan Parmarthik Trust

302, Krishna Kunj, V. L. Mehta Marg, Vile Parle (West)

Mumbai - 400 056 INDIA

Tel. : +91 22 2613 0820 / 2610 4912

✉ info@vitragvani.com 🌐 www.vitragvani.com 📘 /vitragvanee 📺 /c/vitragvanii

✉ info@vitragvani.com 🌐 www.vitragvani.com 📘 /vitragvanee 📺 /c/vitragvanii